पीथमपुर धूल पंचमी मेले में शिव बारात

- लेखक : प्रो (डॉ) अश्विनी केशरवानी
- तारीख : March 30, 2024

इतिहास इस बात का साक्षी है कि छत्तीसगढ़ की भूमि अनादि काल से ही अपनी परंपरा, समर्पण की भावना, सरलता और कलाओं की विपुलता के कारण सारे देश के लिए आकर्षण का केंद्र रहा है। यहां के लोगों का भोलापन, यहां के शासकों की वचनबद्धता, दानशीलता और प्रकृति के निश्छल दुलार का ही परिणाम है कि यहां के लोग सुख को तो आपस में बांटते ही हैं, दुख को भी बांट लेते हैं। यही कारण है कि सुख और दुख में विचलित न होकर यहां के लोग हर समय एक उत्सव का सा माहौल बनाए रखते हैं। किसी प्रकार का बवाल उनकी उत्सवप्रियता में कमी नहीं ला पाती। झुलसती गर्मी में उनके चैपाल गुंजित होते हैं, मुसलाधार बारिस में इनके खेत गमकते हैं और कड़कड़ाती ठंड में इनके खेत और खलिहान झूमते हैं। 'धान का कटोरा' कहे जाने वाले इस प्रदेश की रग रग में उत्सवप्रियता, सहजता और वचनबद्धता कई तरीके से प्रकट होती है। मेला और मड़ई इनमें से एक है। कृषि संस्कृति का प्रतीक छत्तीसगढ़ का मड़ई यहां के लोगों की सहृदयता, मिलजुलकर रहने की प्रकृति तथा इनकी सांस्कृतिक परंपरा को सहज ही प्रदर्शित करती है। इसी प्रकार माघ-फाल्गुन के महिने में मेले का आयोजन होता है। मेला की तिथि पूर्व निर्धारित होती है जबकि मड़ई की तिथि सुविधानुसार तय की जाती है।

छत्तीसगढ़ में मेले की परंपरा बहुत पुरानी है। जब से मानव सभ्यता का विकास हुआ है तब से किसी घटना अथवा अवसर पर एकत्र होकर धार्मिक उत्सव का आयोजन से ही मेले की शुरूवात हुई है। प्रारंभिक दौर में दर्शनार्थियों की भीड़ होती है..स्नान, ध्यान और पूजा-पाठ होती है फिर चार-छै फूल, अगरबत्ती और नारियल की दुकानें लगने लगती है और लोगों की बढ़ती भीड़ को देखकर चार पैसा कमाने की दृष्टि से व्यापारियों का आना शुरू हो जाता है। इस प्रकार धीरे धीरे यह प्रक्रिया चलती है और यह मेले का रूप लेने लगता है। इसे मेले का रूप देने, वहां की व्यवस्था आदि उस क्षेत्र के राजा, जमींदार, मालगुजार और गौंटिया किया करते थे। जब तक उनका प्रभुत्व रहा तब तक वे इस परंपरा को निभाते रहे लेकिन देश की आजादी के साथ ही उनका प्रभुत्व समाप्त हो गया और प्रशासनिक व्यवस्था का विस्तार हुआ तब मेले की व्यवस्था का दायित्व जनपद पंचायत

और बाद में नगर पालिका करने लगी। जनता भी राजा, जमींदार, मालगुजार और गौंटिया लोगों को अपने सिर-आंखों में बिठाकर उन्हें प्रथम पूजा का अधिकार प्रदान करती रही है। इस परंपरा के कई उदाहरण आज भी देखे जा सकते हैं।

सेंसस आफ इंडिया के फेयर एण्ड फेस्टिवल अंक 1961 के अनुसार सन् 1908 ईसवीं में गवर्नर जनरल इन कौंसिल ने एक जिल्यूशन पास किया कि समूचे हिन्दुस्तान में क्षेत्रीय परंपरा को ध्यान में रखकर वहां आयोजित होने वाले फेयर एण्ड फेस्टिवल को एकत्र करके उसकी पूरी व्यवस्था की जाये। इस तारतम्य में सन् 1880 और 1910 में इम्पिरियल गजेटियर का प्रकाशन किया गया है। इसी समय डिस्ट्रिक्ट गजेटियर का भी प्रकाशन किया गया। इस गजेटियर में उस जिले के त्योहारों और मेलों के उपर प्रकाश डाला गया है। सं ेसस ऑफ इंडिया 1961 के फेयर एण्ड फेस्टिवल ऑफ मध्यप्रदेश में क्षेत्रीय त्योहारों और मेलों के औचित्य पर प्रकाश डाला गया है। इसमें कहा गया है कि ''उत्सव और मेले का महत्व क्षेत्र के पशुओं, कृषि उत्पादकों और संसाधनों की प्राप्ति हेतु एकत्रीकरण के लिए मेला और उत्सव समीपवर्ती औी दूरवर्ती, अनेक संस्कृतियों एवं धर्मो, कला कौशल, विचारों और प्रकारों तथा हस्त कौशल आदि के प्रदर्शन स्थल होते हैं जहां भविष्य के व्यापारिक, उत्कृष्ट औजार, साधन सामग्री एवं भूतकाल की लुप्त होती जा रही व्यवहार की सामग्री का स्थानीय परिवर्तनों के साथ अनुकूल कल्पना और कौशल की अभिव्यक्ति प्रदर्शित होती है। ईस्ट इंडिया कम्पनी के आदिम निर्यात नीतियों से विचलित तथा मशीनों से निर्मित सामानों की प्रतिबंधित आयात के कारण विगत शताब्दी की समाप्ति तक मेला और उत्सव लोक स्वास्थ विभाग के रूचि के विषय रहे, वे अब व्यापार और वाणिज्य के महत्वपूर्ण केंद्र बने नहीं रह सके लेकिन प्रशासकीय दृष्टिकोण में मेला और उत्सव महामारी और बिमारियों का जड़ मात्र बनकर रह गया है।''

छत्तीसगढ़ में शिवरीनारायण, पीथमपुर और राजिम मेले का अलग महत्व है। शिवरीनारायण और राजिम में जहां वैष्णव परंपरा के देव प्रमुख हैं वहां पीथमपुर में शैव परंपरा के देव विराजमान हैं। शासकीय अभिलेखों के अनुसार इस क्षेत्र में लगने वाला लगभग 100 से 200 वर्ष पुरानी है। इन स्थानों में प्रशासनिक व्यवस्था के पूर्व मेला एक-एक माह तक लगता था। 1961 में प्रकाशित सेंसस ऑफ इंडिया के अनुसार इन नगरों का मेला 10 दिनों तक लगता था और यहां लगभग एक लाख दर्शनार्थी आते थे। शिवरीनारायण और राजिम का मेला जहां माघ पूर्णिमा को लगता है जबकि पीथमपुर का मेला फाल्गुन पूर्णिमा से शुरू होता है।

पीथमपुर, नवगठित छत्तीसगढ़ प्रांत के जांजगीर-चांपा जिलान्तर्गत जांजगीर जिला मुख्यालय से 13 कि.मी., दक्षिण पूर्व मध्य रेल्वे के चांपा जंक्शन से मात्र 08 कि. मी. और राजधानी रायपुर से 173 कि. मी. रेल मार्ग से नैला होकर स्थित है। यह नगर दक्षिण में 21ं 55' उत्तरी अंक्षांश और 82ं 35' पूर्वी देशांश पर हसदेव नदी के तट पर स्थित है। यहां छत्तीसगढ़ के ज्योतिर्लिंग काल कालेश्वरनाथ का सुप्रसिद्ध मंदिर है। यहां प्रतिवर्ष फाल्गुन पूर्णिमा याने होली के दूसरे दिन से चैत्र अमावस्या तक 15 दिवसीय मेला लगता है। धूल पंचमी की संध्या यहां काल कालेश्वरनाथ की बहुचर्चित और परंपरागत बारात निकलती है जो पूरे गांव का भ्रमण करके मंदिर परिसर में लाकर उसकी पूजा अर्चना करके पूरी होती है। शिव जी की इस बारात में नंगे बदन वाले नागा साधु बिखरे बाल, शरीर पर भभूत लगाये औा हाथ मे त्रिशूल लिए नाचते गाते सम्मिलित होते हैं। उनकी उपस्थिति से शिव बारात का यह दृश्य जीवंत हो उठता है। मौसम भी बौरा जाता है, चारों ओर हवाएं चलने लगती है, धूल उड़ने लगता है..ग्रामीणों की भजन मंडली के गाने का स्वर ऊंचा हो जाता है और फिर जैसे ही कालेश्वरनाथ की पालकी मंदिर से बाहर निकलती है, चारों ओर गुलाल बिखरने लगता है और हर हर महादेव गुंजायमान होने लगता है। दर्शनार्थियों की अपार भीड़ के बीच वैष्णव साधु भी इसमें सम्मिलित होते हैं। धिवरा-तुलसी के जन्मांध कवि श्री नरसिंहदास वैष्णव ने तो इस दृश्य से अभिभूत होकर रामायण की तर्ज में ''शिवायन'' की रचना कर डाली। इस खंडकाव्य में उन्होंने शिवजी के दृश्य की जीवंत झांकी पुस्तुत करते हुए लिखा है:-

आइगे बरात गांव तीर भोला बबा के,
देखे जाबो चला गियां संगी ला जगाव रे।

डारो टोपी मारो धोती पाय पायजामा कसि,
गल गलाबंद अंग कुरता लगाव रे।
हेरा पनही दौड़त बनही कहे नरसिंह दास,
एक बार हहा करि, सबे कहुँ घिघियावा रे।
पहुंच गये सुक्खा भये देखि भूत प्रेत कहें,
नई बांचन दाई बबा प्रान ले भगाव रे।
कोऊ भूत चढ़े गदहा म, कोऊ कुकुर म चढ़े।
कोऊ कोलिहा म चढ़ि चढ़ि आवत।
कोऊ बिघवा म चढ़ि बछुवा म चढ़ि।
कोऊ घुघुवा म चढ़ि हांकत उड़ावत।
सर्र सर्र सांप करे, गर्र गर्र बाघ करे।
हांव हांव कुत्ता करे, कोलिहा हुवावत।
कहे नरसिंह दास शंभू के बरात देखि।
गिरत परत सब लरिका भगावत॥

करीब डेढ़-दो कि. मी. की कछारी भूमि में बेतरतीब फैले किसिम किसिम की दुकानों की श्रृंखला होती हैं जिसे जनपद पंचायत जांजगीर प्रति वर्ष कभी आड़ी, कभी तिरछी और कभी गोलागार लगाने का प्रयास करती है। कुछ लोग पीथमपुर को ''प्रियमपुर'' कहते हैं। उनका मानना है कि यहां के मेले में लाखों लोग आते हैं और अपने सगे-सम्बंधियों से मिलते हैं। कुशलक्षेम पूछते हैं और चर्चा के बाद विवाह तय हो जाते हैं बाद में वे इस रिश्ते को कालेश्वर महादेव का प्रसाद मानकर ग्रहण कर लेते हैं। मेले में सामानों की खरीददारी करके हंसी खुशी घर को लौटते हैं।

पीथमपुर के नामकरण और महत्ता के बारे में आंचलिक कवि श्री तुलाराम गोपाल ने अपनी पुस्तक ''शिवरीनारायण और सात देवालय'' में लिखते हैं-''पौराणिक काल में एक बार धर्म वंश के राजा अंगराज के दुराचारी पुत्र बेन प्रजा की मार से भागते भागते हसदेव नदी के तट पर आये और अंततः मारे गये। चूंकि राजा अंगराज बड़े ही दयालु, सहिष्णु और धार्मिक प्रकृति के थे अतः उनके वंश की रक्षा के लिए ऋषि-मुनियों ने बेन के मृत शरीर का मंथन किया। पापी होने के कारण उसकी जांघ से एक कुरूप और बौने पुरूष का जन्म हुआ। चिंचित ऋषियों ने पुनः उसकी भुजाओं का मंथन किया। तब एक नर-नारी का जोड़ा निकला जिसे क्रमशः पृथु और अर्चि नाम दिया गया:-

तब युग भुग से निकला नर-नारी का वह जोड़ा
नर नारीश्वर ने अनादि का गुरू आलिंगन तोड़ा।
रूप राशि के द्वैत कलश में दो सुंदरतम बानी
जली एक ही ज्योति प्राण में पुलका लोक बिछाती।
प्रमंथनों से प्रगठित प्रभु का नाम रखे पृथु यह कह
प्रथन करेंगे यश का पृथु सम्राट, अर्चि के पति रह..
और कहलायेगा 'पीथमपुर' यह सुरम्य सुंदर वन
जहां पराजित हुआ पाप प्रभु प्रकटे पृथु का धर तन॥

ऋषि मुनियों ने उन्हें पति-पत्नि के रूप में स्वीकार करके विदा किया गया। राजा पृथु सबको साथ लेकर राजधानी को चले गये। इधर बौना कुरूप पुरूष शोक विहल होकर महादेव की शरण में जाता है। यहां उन्होंने महादेव की घोर तपस्या की तब महादेव जी उन्हें दर्शन देकर लिंग पूजा करने का आदेश देकर अंतध्यान हो गये। लिंग पूजा से बौना पुरूष कृतार्थ होकर बैकुण्ठ धाम को चला जाता है और शिव लिंग काल के गर्त में समा जाता है। कालान्तर में जब यहां मानव बस्ती बसी और यहां घूरा बना। उसी घूरे में दबे शिवजी ने हीरासाय को स्वप्न देकर पुनर्प्रतिष्ठित हुए और यहां मेले की शुरूवात हुई।

पीथमपुर में मेला लगने के पीछे एक किंवदंती प्रचलित है जिसका वर्णन ‘‘सेंसस ऑफ इंडिया ’’ के फेयर एण्ड फेस्टिवल अंक में है। उसके अनुसार पीथमपुर चांपा जमींदारी के अंतर्गत आता था। यहां हीरासाय नाम का एक तेली रहता था जो आगे चलकर शिवजी का बड़ा भक्त हुआ। कुछ वर्षो से वह पेट रोग से पीड़ित था। हर तरह के इलाज कराने के बाद भी उसे कोई फायदा नहीं हुआ। एक बार तो स्थिति इतनी बिगड़ गयी कि बिस्तर से उठना मुश्किल हो गया। ईश्वर आराधना के अलावा और कोई चारा नहीं था, इसी बीच एक रात उसने एक स्वप्न देखा। सपने में स्वयं भगवान शिव उनसे कह रहे थे-‘‘ उठो हीरासाय, पास के घूरे में मेरा एक पार्थिव लिंग बरसों से दबा पड़ा है। उसे वहां से निकालकर प्रतिष्ठित करो और गांजा, भांग, चीलम, धतूरा और नारियल चढ़ाकर पूजा-अर्चना करो इससे तुम्हें इस रोग से मुक्ति मिल जायेगी।’’ सुबह जब उसकी नींद खुली तब उसके मस्तिष्क में शिवजी का स्वप्नादेश गूंज रहा था। हीरासाय जो पेट रोग से पीड़ित था और बिस्तर से उठने में असमर्थ था, ने अपनी सुधबुध खोकर सारे गांव को इकट्ठा किया और शिवजी के स्वप्नादेश को कह सुनाया। सबकी उपस्थिति में पास के उस घूरे को खोदा गया। वहां शिवजी का एक लिंग मिला। उसे वहां से निकालकर प्रतिष्ठित किया गया और पूजा-अर्चना की गयी। सबने देखा कि हीरासाय पेट रोग से मुक्त हो गया। सारागांव हीरासाय की शिव भक्ति से प्रसन्न हो गया। इस प्रकार गांव को रक्षक देव के रूप में स्वयंभू शिव मिला और हीरासाय जैसा शिवभक्त। इससे गांव का कलेवर ही बदल गया, चारों ओर से लोग यहां आते और पूजा-अर्चना करने से उनकी मनोकामना पूरी हो जाती। शिवभक्तों की भीड़ से गांव सराबोर हो गया। ऐसे शिवलिंग के मिलने से जिससे गांव का कलेवर ही बदल जाये उसे ‘‘कलेश्वरनाथ’’ कहना अतिश्योक्ति नहीं है ? स्व. श्री तुलाराम गोपान ने भी लिखा है:-

शंकर जी सिर छू बौने को अभयदान दे बोले
इसी धरा पर यहीं खोद, निकलूंगा मैं बम भोले।
मेरे उस पाषाण रूप का एक लिंग का लघु तन
जा तेरा कल्याण करेगा अरे अभागा निर्धन।
खुदी भूमि निकले शंकर जी लिंग रूप धारण कर
बौना बहल उठा, फाल्गुन का पूर्ण चंद्र मुसकाया।
मेला भरा महान, शिव गणों ने आनंद मनाया
पीथमपुर ने पृथ्वीं में अपना यश कमाया।।

इस घटना के तीसरे दिन हीरासाय को पुनः स्वप्नादेश हुआ कि यहां के जमींदार से भोगराग आदि के लिए अनुरोध करो। चांपा के जमींदार प्रेमसिंह तब तक इस घटना से अवगत हो चुके थे, हीरासाय के अनुरोध पर उन्होंने तुरंत अपने भाई कुंवर नेवाससिंह को पीथमपुर में व्यवस्था करने का आदेश दिया। उन्होंने एक ऊंचे टिले में छतरी बनवा दिया। आगे चलकर जगमाल गांगजी नामक एक ठेकेदार ने इसे मंदिर का रूप दिया।

चांपा के पंडित छविनाथ द्विवेदी ने संस्कृत भाषा में ‘‘कलिश्वर माहात्म्य स्त्रोत्रम’’ संवत् 1987 में लिखकर प्रकाशित कराया था। उसके अनुसार पीथमपुर के शिवलिंग का उद्भव चैत कृष्ण प्रतिप्रदा संवत् 1940 को हुआ था। मंदिर का निर्माण काल संवत् 1949 में शुरू होकर संवत् 1953 में पूरा हुआ और इसी वर्ष इसकी प्रतिष्ठा हुई। पीथमपुर के श्री तुलसीराम पटेल कृत ‘श्री कलेश्वर महात्म्य‘ के अनुसार पंडित काशीप्रसाद पाठक के प्रपिता पंडित रामनारायण पाठक ने संवत् 1945 में हीरासाय तेली से शिवलिंग की प्रतिष्ठा कराया। श्री तुलसीराम पटेल द्वारा सन 1954 में प्रकाशित श्री कलेश्वर महात्म्य में हीरासाय के वंश का वर्णन हैं-

तेहिके पुत्र पांच हो भयऊ।
शिव सेवा में मन चित दियेऊ।।
प्रथम पुत्र टिकाराम पाये।
बोधसाय भागवत, सखाराम अरु बुद्धू कहाये।।
सो शिवसेवा में अति मन दिन्हा।

यात्रीगण को शिक्षा दिन्हा॥
यही विधि शिक्षा देते आवत।
सकल वंश शिवभक्त कहावत॥

पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर द्वारा प्रकाशित और डॉ. प्यारेलाल गुप्त द्वारा लिखित पुस्तक ''प्राचीन छत्तीसगढ़'' में भी उक्त घटना के अलावा एक अन्य घटना का भी उल्लेख है। उसके अनुसार खरियार के जमींदार भी पेट रोग से मुक्ति पाने पीथमपुर आये थे। यहां की मानता के बाद उन्हें पेट रोग से मुक्ति मिली। खरियार (उड़ीसा) के जिस जमींदार को पेट रोग से मुक्ति पाने के लिए पीथमपुर की यात्रा करना बताया गया है वे वास्तव में अपने वंश की वृद्धि के लिए यहां आये थे। खरियार के युवराज और उड़ीसा के सुप्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. जे. पी. सिंहदेव ने मुझे बताया कि उनके दादा राजा वीर विक्रम सिंहदेव ने अपने वंश की वृद्धि के लिए पीथमपुर गए थे। समय आने पर कालेश्वरनाथ की कृपा से उनके दो पुत्र क्रमशः आरतातनदेव और विजयभैरवदेव तथा दो पुत्री कनक मंजरी देवी और शोभज्ञा मंजरी देवी का जन्म हुआ। वंश वृद्धि होने पर उन्होंने पीथमपुर में एक मंदिर का निर्माण कराया लेकिन मंदिर में मूर्ति की स्थापना के पूर्व 36 वर्ष की अल्पायु में सन् 1912 में उनका स्वर्गवास हो गया। बाद में मंदिर ट्रस्ट द्वारा उस मंदिर में गौरी (पार्वती) जी की मूर्ति स्थापित करायी गयी। लेकिन आज भी यहां पेट रोग से मुक्ति पाने वालों और वंश वृद्धि का आशीर्वाद पाने वालों की भीड़ होती है। जनश्रुति यह है कि पीथमपुर के कालेश्वरनाथ (अपभ्रंश कलेश्वरनाथ) की फाल्गुन पूर्णिमा को पूजा-अर्चना और अभिषेक करने से वंश की अवश्य वृद्धि होती है। यहां एक किंवदंति प्रचलित है जिसके अनुसार एक बार नागा साधु के आशीर्वाद से कुलीन परिवार की एक पुत्रवधू को पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई। इस घटना को जानकर अगले वर्ष अनेक महिलाएं पुत्ररत्न की लालसा लिए यहां आई जिससे नागा साधुओं को बहुत परेशानी हुई और उनकी संख्या धीरे धीरे कम होने लगी। कदाचित् इसी कारण नागा साधुओं की संख्या कम हो गयी है। लेकिन यह सत्य है कि आज भी अनेक दंपत्ति पुत्र कामना लिए यहां आती हैं और मनोकामना पूरी होने पर अगले वर्ष जमीन पर लोट मारते दर्शन करने यहां आते हैं। पीथमपुर के काल कालेश्वरनाथ की लीला अपरम्पार है। छत्तीसगढ़ के भारतेन्दु कालीन कवि श्री वरणत सिंह चैहान ने 'शिवरीनारायण महात्म्य और पंचकोसी यात्रा' नामक पुस्तक में पीथमपुर की महत्ता का बखान किया है:-

हसदो नदी के तीर में, कलेश्वरनाथ भगवान।
दर्शन तिनको जो करे, पावही पद निर्वाण॥
फाल्गुन मास की पूर्णिमा, होवत तहं स्नान।
काशी समान फल पावही, गावत वेद पुराण॥
बारह मास के पूर्णिमा, जो कोई कर स्नान।
सो जैईहैं बैकुंठ को, कहे वरणत सिंह चैहान॥

इसी प्रकार पीथमपुर मठ के महंत स्वामी दयानंद भारती ने भी संस्कृत में ''पीथमपुर के श्री शंकर माहात्म्य'' लिखकर सन् 1953 में प्रकाशित कराया था। 36 श्लोक में उन्होंने पीथमपुर के शिवजी को काल कालेश्वर महादेव, पीथमपुर में चांपा के सनातन धर्म संस्कृत पाठशला की शाखा खोले जाने, सन् 1953 में ही तिलभांडेश्वर, काशी से चांदी के पंचमुखी शिवजी की मूर्ति बनवाकर लाने और उसी वर्ष से पीथमपुर के मेले में शिवजी की शोभायात्रा निकलने की बातों का उल्लेख किया है। उन्होंने पीथमपुर में मंदिर की व्यवस्था के लिए एक मठ की स्थापना तथा उसके 50 वर्षों में दस महंतों के नामों का उल्लेख इस माहात्म्य में किया है। इस माहात्म्य को लिखने की प्रेरणा उन्हें पंडित शिवशंकर रचित और सन् 1914 में जबलपुर से प्रकाशित ''पीथमपुर माहात्म्य'' को पढ़कर मिली। जन आकांक्षाओं के अनुरूप उन्होंने महात्म्य को संस्कृत में लिखा है और ग्रंथ का पुनप्रकाशन प्रो. अश्विनी केशरवानी के कुशल संपादन में ''पीथमपुर के कालेश्वरनाथ'' शीर्षक से बिलासा प्रकाशन बिलासपुर द्वारा किया गया है।

फाल्गुन पूर्णिमा याने होली के दूसरे दिन से यहां 15 दिवसीय मेला लगता है। विभिन्न प्रकार की दुकानें, झूला, सिनेमा और सर्कस यहां आते हैं। यहां भी उड़िया परंपरा को प्रदर्शित करने वाली स्वादिष्ट 'उखरा' बहुतायत में बिकने आता है। उखरा

उड़ीसा और छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक परंपराओं को जोड़ती है। यहां के ग्राम्यांचलों में उड़ीसा के भाट कलाकारों द्वारा बनाया गया भित्तिचित्र देखने को मिला है। इन चित्रों के रंग भगवान जगन्नाथ के रंगों जैसा होता है। इन भित्तिचित्रों को खोजी पत्रकार श्री सतीश जायसवाल ने 'महानदी घाटी के भित्तिचित्र' कहकर उड़ीसा और छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक परंपराओं को जोड़ने वाला बताया है।

धूल पंचमी को यहां का मेला अपनी चरम सीमा पर होती है। इस दिन संध्या में काल कालेश्वर महादेव की परंपरागत बारात निकलती है। शिवजी की बारात में नागा साधुओं की उपस्थिति उसे जीवंत बना देती है। उस समय ऐसा प्रतीत होता है मानों चैकी पर सवार पंचमुखी शिवजी दुल्हे के रूप में सवार है और अलमस्त नंग धड़ंग नागा साधु बाराती बनकर यहां उतर आए हों...? पीथमपुर के मेले में नागा साधुओं का आगमन कब और कैसे हुआ, इसका स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता। परन्तु वर्षो से यहां नागा साधुओं का आगमन होता आ रहा है। वे इस मेले के आकर्षण होते हैं। कोई योगासन, कोई हट योग, तो कोई गांजे की चीलम फूंककर अलमस्त समाधिस्थ होता है। इधर मेला चंद्रमा की घटती कलाओं के साथ साथ अपना आकार बदलने लगता है, वहीं सिनेमा, सर्कस, प्रदर्शिनी, होटल, बर्तन कपड़ा और मनिहारी दुकान से वैवाहिक सामग्री की खरीददारी करके वापसी के लिए उद्यत ग्रामीणों की झांकी देखते ही बनती है। इसे देखकर कवि श्री तुलाराम गोपाल का मन गा उठता है:-

युगों युगों से चली आ रही यह पुनीत परिपाटी
कलयुग में है प्रसिद्ध यह पीथमपुर की माटी।
जहां स्वप्न देकर शंकर जी पुनप्रर्कट हो आये
यह मनुष्य का काम कि उससे पूरा लाभ उठाये।।

पीथमपुर में आये नागा साधुओं के अनुसार आदि शंकराचार्य ने सनातन धर्म के प्रचार में लगे जनों की रक्षा का भार नागा सम्प्रदाय को सौंप दिया जिसे उन्होंने जिम्मेदारियों के साथ निभाया। उनकी धारणा है कि माता अनसुइया और उत्तर ऋषि के पुत्र दत्तात्रे के द्वारा इस पंथ का सृजन हुआ। नागा साधु सात प्रमुख अखाड़ों से सम्बद्ध होते हैं। इनमें पंचजना अखाड़ा, पंचशंभू अखाड़ा, अमान अखाड़ा, अग्नि अखाड़ा, निर्माण अखाड़ा, महा निर्माणी अखाड़ा और निरंजनी अखाड़ा प्रमुख है। नागा साधु इस मेले में शामिल होने के लिए अमरकंटक, ऋषिकेश, हरिद्वार, नासिक, इलाहाबाद, बनारस, पशुपतिनाथ, असाम, आदि स्थानों से आते हैं। यात्रा के दौरान उन्हें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, क्योंकि वे निर्वस्त्र होते हैं। ठंड से बचने के लिए वे भभूत को अपने पूरे शरीर में मल लेते हैं। गांजा और भांग तो जैसे उनके लिए शिवजी का प्रसाद है। नागा साधुओं ने एक साक्षात्कार में बताया कि निर्वस्त्र होने से वे अपने को प्रकृति के निकट पाते हैं। इससे उन्हें मानसिक शांति मिलती है। अश्लीलता के बारे में पूछने पर वे बताते हैं-'इसमें अश्लीलता क्या है ? दिगंबर जैनियों के गुरू भी तो निर्वस्त्र थे। वास्तव में यह काम पर संयम की विजय का प्रतीक है।

वास्तव में यहां का मेला फाल्गुन की विदाई और चैत्र मास के आगमन के साथ शुरू होता है। मौसम की संधि काल के कारण आंधी-पानी का प्राकृतिक प्रकोप अक्सर होता है। कभी कभी आग लग जाती है जिससे दुकानें जलकर भस्म हो जाती है। इस आपाधापी में बच्चे, बूढ़े, औरत, मर्द अपने स्वजनों से बिछुड़ जाते हैं। इसके बावजूद उनके उत्साह में कोई कमी नहीं आती। काल कालेश्वर महादेव के इस मंदिर में मन्नतें मानने वालों की भीड़ बढ़ती ही जा रही है और मनौती पूरी होने पर अगले वर्ष के मले में जमीन में 'लोट मारते' आने की परंपरा का विस्तार होता जा रहा है। महाशिवरात्रि के दिन चांपा के डोंगाघाट और मदनपुरगढ़ से जल लेकर कांवरियों के द्वारा कालेश्वरनाथ में चढ़ाया जाता है।

इन सबके बावजूद पीथमपुर जाने का मार्ग जर्जर है, हसदेव नदी का पानी औद्योगिक प्रदूषण के कारण पूरी तरह से प्रदूषित हो गया है। इससे यहां की नैसर्गिक, पुरातात्विक धरोहर के नष्ट होने की संभावना बढ़ती जा रही है। हसदेव नदी को कभी शिवगंगा कहा जाता था लेकिन आज प्रदूषण के कारण यह केवल पुस्तक की शोभा बन गयी है। छत्तीसगढ़ प्रदेश बनने के बाद इस नगर में भी पर्यटन स्थल की सुविधाएं होनी चाहिए। कवि श्री तुलाराम गोपाल भी गाते हैं:-

फाल्गुन की पूर्णिमा आज भी गौरव से कहती है
पीथमपुर में हसदो के संग शिवगंगा बहती है।
लोभ लाभ को त्याग, शरण शंकर की जाने वालों
पीथमपुर में बैठ ध्यानकर शिव को पास बुला लो।।

आलेख

प्रो (डॉ) अश्विनी केसरवानी, चांपा, छत्तीसगढ़